HUMAN RIGHTS WATCH

“वे कहते हैं हम गंदे हैं”

भारत में हाशिए पर रह रहे लोगों को शिक्षा से वंचित रखना

HUMAN RIGHTS WATCH

“वे कहते हैं हम गंदे हैं”

भारत में हाशिए पर रह रहे लोगों को शिक्षा से वंचित रखना

HUMAN RIGHTS WATCH

“वे कहते हैं हम गंदे हैं”

भारत में हाशिए पर रह रहे लोगों को शिक्षा से वंचित रखना

सारांश 1

सरकारी प्रतिक्रिया की विफलताएँ 7

मुख्य सिफारिशें 10

सिफ़ारिशें 12

भारत की केंद्र सरकार को: 12

राज्य सरकारों को: 14

विदेशी दानकर्ताओं, सहायता एजेंसियों तथा सम्बद्ध सरकारों को: 15

आभार 16

सारांश

अध्यापिका ने हमें हमेशा कमरे में एक किनारे बैठने को कहा। वह हमें चाबियाँ फेंक कर मारती थीं। (जब वह नाराज़ होती थीं)। हमें खाना तभी मिलता था जब अन्य बच्चे खा चुके होते थे और खाना बच जाता था। (धीरे धीरे) (हमने) स्कूल जाना ही छोड़ दिया।
-उत्तर प्रदेश का १४ वर्षीय दलित बालक श्याम जो अब एक ईंट की भट्टी में काम करता है, अप्रैल २०१३

जब आप अधिकारियों से शिक्षा के अधिकार पर बात करते हैं, तो उन्हें योजनाओं एवं सर्कुलर पर चर्चा करना बहुत अच्छा लगता है। लेकिन जब उनसे इनके कार्यान्वयन के बारे में पूछा जाता है तो वे बगलें झांकने लगते हैं। उनके पास कहने के लिए कुछ नहीं होता है।
-सनत सिन्हा, मुख्य संयोजक, बाल सखा, पटना, जुलाई २०१३

वर्ष २००९ में भारत ने बच्चों की मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा के अधिकार का कानून लागू किया जिसका उद्देश्य था समानता एवं भेदभाव मुक्त सिद्धांतों के अंतर्गत ६ से १४ वर्ष के सभी बच्चों को मुफ़्त एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना। एक ऐसे देश के लिए जो छह दशक पूर्व स्वतंत्रता के समय गरीबी और अशिक्षा से जूझ रहा था, यह एक महत्वाकांक्षी और बहुत पहले ही उठाया जाने योग्य कदम था जिसका उद्देश्य बच्चों के प्रति घरेलू और अंतरराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त दायित्वों को पूरा करना था। यह इस बात का भी साक्षी है कि भारत विश्व में सबसे बड़ी संख्या और सबसे कम आयु के बाल कामगारों के साथ एक उभरती हुई अर्थव्यवस्था के तौर पर कितना आश्वस्त है।

हालांकि अमल में आने के चार वर्ष बाद शिक्षा के अधिकार कानून का अभी भी पूरी तरह कार्यान्वयन होना है। जबकि प्राथमिक स्कूलों के सभी बालकों का नाम स्कूलों में लिखा हुआ है, फिर भी लाखों बच्चे वास्तव में कक्षा में जाते ही नहीं हैं। कई बार इसका कारण यह होता है कि उनकी जाति, नस्ल, आर्थिक स्थिति, धर्म अथवा लिंग उनकी शिक्षा प्राप्ति की राह में एक बाधा

बन जाता है। कई विकलांग बच्चे विशिष्ट प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों अथवा अपर्याप्त सुविधाओं और देखभाल के अभाव में सरकारी स्कूलों में पढ़ाई से वंचित रह जाते हैं।

राज्यों की सरकारें सामान्यतः इस समस्या को अनदेखा कर देती हैं। अधिकारी प्रत्येक बच्चे की प्रगति की निगरानी और उस पर नजर रखने के लिए विस्तृत योजना का कार्यान्वयन ही नहीं करते हैं। चाहे वे जिला अथवा राज्य अधिकारी हों, ग्राम समितियाँ हों, स्कूलों के प्रधानाचार्य हों, अथवा अध्यापक हों। संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (UNICEF) के अनुसार, भारत में आठ करोड़ भारतीय बच्चे प्राथमिक शिक्षा पूरी करने से पहले ही स्कूल छोड़ देते हैं।

इस रिपोर्ट में, ह्यूमन राइट्स वॉच बच्चों के स्कूल जाने के मार्ग में आ रहे व्यवधानों और इस समस्या के निदान के लिए जरूरी कदम उठाने में सरकार की विफलता का निरीक्षण करती है। दलित, आदिवासी गुट और मुसलमान सहित अन्य अधिकारहीन समुदायों के बच्चों की शिक्षा तक पहुँच के मार्ग में भेदभाव एक बहुत बड़ा व्यवधान है। सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों के कारण पहले से ही संवेदनशील इन बच्चों के स्कूल में बने रहने के लिए इन पर विशेष ध्यान दिए जाने और अधिक प्रोत्साहन की जरूरत है। इसके बजाय, समुचित निगरानी के अभाव में ये बच्चे अलग थलग पड़ने के खतरे से जूझ रहे हैं और उन्हें शिक्षा का अधिकार कानून के अंतर्गत जिस समान एवं अनुकूल माहौल की जरूरत है, उससे भी वे वंचित हैं। निगरानी के अभाव में पहले से ही खतरे का सामना कर रहे बच्चों को रोके रखने में दिक्कतें आती हैं और उनमें से अनेक या तो काम करने लगते हैं या कम आयु में ही उनका विवाह हो जाता है।

१ अप्रैल २०१३ शिक्षा का अधिकार कानून के प्रमुख प्रावधानों को तीन वर्ष में पूरा करने की समय सीमा का अंतिम दिन था। सरकार ने कुछ क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है, लेकिन कई अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्यों को पूरा नहीं किया। जबकि प्राथमिक स्कूलों में वास्तविक तौर पर भर्ती लगभग शत प्रतिशत है, फिर भी नियमित हाजिरी और बच्चों का स्कूल में रुके रहना एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। स्थानीय मानवाधिकार समूहों का कहना है कि बच्चों की हाजिरी का हिसाब रखने और स्कूल छोड़कर जाने वाले बच्चों की पूरी जानकारी मुहैया कराने के बारे में कोई प्रणाली अभी भी विकसित नहीं हो पाई है और न ही इस तरह के 'सहारा देने वाले' कोर्स शुरू किए गए हैं जो उन बच्चों के लिए लाभकारी हों जो बड़ी आयु में स्कूल छोड़ देते हैं, या दाखिला

लेते हैं ताकि वे अपनी आयु के अनुरूप कक्षा में अपने सहपाठियों के साथ बराबर की पढ़ाई कर सकें।

केंद्र सरकार इस बात को मानती है कि बच्चों की जाति, वर्ग, लिंग तथा ख़ास जरूरतों के आधार पर उन्हें अलग थलग करना कई रूप ले सकता है और वह शिक्षा तक पहुँच, भागीदारी, स्कूल में बने रहना, उपलब्धियों तथा प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने को प्रभावित करता है। और इसीलिए यह 'प्राथमिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने के मार्ग में सबसे बड़ी चुनौती है'। सरकार ने शिक्षा के अधिकार के तहत सबसे गरीब और संवेदनशील तबके के बच्चों की हाजिरी बरकरार रखने के लिए कई नीतियाँ बनाई हैं। हालाँकि शिक्षा अधिकारी स्कूलों में कुछ बच्चों के साथ भेदभाव या उन्हें अलग थलग करने के प्रचलन की मौजूदगी की बात को स्वीकार करने में आनाकानी करते हैं, सरकार के प्रमुख शिक्षा कार्यक्रम सर्व शिक्षा अभियान द्वारा २०१२ में किए गए अध्ययन से स्कूलों में इस प्रकार की अलग थलग करने वाली प्रक्रियाओं का पता चला, अध्ययन में यह भी कहा गया है कि इस बात की तत्काल आवश्यकता है कि अधिकारी इसे स्वीकार करें और इसका निदान करें।

ह्यूमन राइट्स वॉच ने इस रिपोर्ट के लिए भारत के चार राज्यों में अनुसंधान किया, और शिक्षा का अधिकार कानून के समुचित कार्यान्वयन के मार्ग में निरंतर आ रही बाधाओं की जाँच के लिए १६० से अधिक लोगों से बातचीत की, जिनमें ८५ बच्चे भी शामिल थे। हमने कोई सर्वेक्षण नहीं किया और न ही सांख्यिकीय विश्लेषण किया। इसके बजाय हमने एक गुणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जिसकी जानकारी हमने बच्चों, अभिभावकों तथा व्यापक स्तर पर शिक्षा विशेषज्ञों, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं, स्थानीय अधिकारियों तथा शिक्षा अधिकारियों के साथ बातचीत करके तथा रिपोर्टों के अपने विश्लेषण और अन्य माध्यमिक स्रोतों द्वारा जुटाई। हमने यह अनुसंधान स्थानीय समूहों के साथ मिलकर किया जिन्होंने उन बच्चों को पहचानने में हमारी मदद की जो स्कूलों से बाहर होने का सबसे अधिक खतरा उठा रहे हैं।

इस रिपोर्ट से पता चलता है कि भेदभाव के विभिन्न रूप हैं- जैसे अध्यापकों द्वारा दलित बच्चों को अलग बैठने के लिए कहना, मुस्लिम और आदिवासी छात्रों के बारे में अपमानजनक टिप्पणियाँ करना, और जब लड़कियों को कक्षा से बाहर रखा जाता है तो ग्राम अधिकारियों द्वारा कोई कार्रवाई न करना। अध्यापक और अन्य बच्चे प्रायः इन बच्चों को उनकी जाति,

समुदाय, कबीले अथवा धर्म के हिसाब से अपमानजनक तरीके से बुलाते हैं। कुछ स्कूलों में कमजोर वर्गों के बच्चों को उनकी जाति या समुदाय के कारण कक्षा का मॉनिटर बनाने जैसे नेतृत्व के काम तक नहीं सौंपे जाते। कई बच्चों से अप्रिय काम करने की अपेक्षा की जाती है, जैसे शौचालय साफ करना आदि। हाशिए पर रह रहे लोगों के मोहल्लों के स्कूलों का मूलढांचा काफी कमजोर होता है और वहाँ के अध्यापक पूरी तरह प्रशिक्षित भी नहीं होते। कई जगह तो जितने अध्यापकों की आवश्यकता होती है, उतने अध्यापक भी नहीं होते।

उदाहरण के तौर पर, उत्तर प्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में घसिया आदिवासी कबीले के बच्चों ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया कि उन्हें स्कूल में अध्यापक और सहपाठियों के हाथों भेदभाव का शिकार होना पड़ता है और अध्यापक उन पर पूरा ध्यान भी नहीं देते। इस प्रकार की बाधाओं का सामना कर रहे अनेक बच्चे कभी कभार ही स्कूल जाते हैं और कई तो जाना बिलकुल बंद कर देते हैं।

एक स्कूल जहां हम गए, वहाँ ५८ घासिया बच्चों को उनकी आयु का ख्याल किए बिना एक ही कमरे में बिठाया गया था और उनसे कहा गया था कि वे अन्य बच्चों से अलग बैठें। उनमें से एक बच्चे ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बतायाः

> अध्यापिका हमें दूसरी तरफ बैठने के लिए कहती हैं। यदि हम और बच्चों के साथ बैठ जाते हैं तो वह हमें डांटती हैं और हमें अलग बैठने के लिए कहती हैं.... अध्यापिका हमारे साथ नही बैठती हैं क्योंकि वह कहती हैं कि हम 'गंदे' हैं। अन्य बच्चे भी रोज हमें गंदा कहते हैं। तो कभी कभी हमें गुस्सा आ जाता है और हम उन्हें मारते हैं।

स्कूल के प्रिंसिपल ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया कि आदिवासी बच्चे एक "बड़ी समस्या" हैं:

> ये घसिया बच्चे देर से स्कूल आते हैं, जब उनका मन होता है तब आते हैं, चाहे हम उनसे कितना भी समय पर आने के लिए क्यों न कहें। उनका मुख्य उद्देश्य सिर्फ यहाँ आकर भोजन करना होता है, पढ़ना नहीं। देखिए वे कितने गंदे हैं।

कई दलित बच्चों ने जिन्होंने ह्यूमन राइट्स वॉच से बात की, उन्होंने शिकायत की कि शिक्षा कर्मचारी और सहपाठी पक्षपात करते हैं। बिहार की एक दलित लड़की प्रिया ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया, "अन्य बच्चे हमें अपने साथ बैठने नहीं देते। कुछ लड़कियाँ कहती हैं, छिः, तुम लोग डोम हो (सड़क पर झाड़ू लगाने वाले)- एक गंदी जाति... इसकी शिकायत करने पर भी अध्यापक कभी कुछ नहीं बोलते"।

इस प्रकार के भेदभावपूर्ण व्यवहार से स्कूलों से गैरहाजिर रहने की घटनाओं में वृद्धि हो रही है। प्रिया के पड़ोस के कई बच्चों ने स्वीकार किया कि वे नियमित रूप से स्कूल नहीं जाते क्योंकि उन्हें वहाँ का उत्साहहीन वातावरण पसंद नहीं है। बच्चे स्कूल से दूर रहते हैं, कक्षा में पिछड़ जाते हैं और अंततः स्कूल जाना बंद कर देते हैं। बिहार के एक शिक्षा कार्यकर्ता ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया, "दलित बच्चों को स्कूल में ऐसा महसूस कराया जाता है जैसे वे घटिया हों, और स्कूल जाति व्यवस्था पर जोर देते हैं। जब किसी काम की बारी आती है जैसे कक्षा की सफाई करना या कूड़ा उठाना, तो वह हमेशा दलित बच्चों से कराया जाता है"।

अन्य स्थानों पर हमने पाया कि मुस्लिम बच्चे स्कूल की उपेक्षा का शिकार होते हैं। दिल्ली के बारह वर्षीय साहिर ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया कि मुस्लिम बच्चों को पढ़ाई के बाहर की गतिविधियों अथवा नेतृत्व जैसी भूमिका से अलग रखा जाता है। "अध्यापक हमें किसी खेल में हिस्सा नहीं लेने देते। कक्षा का मॉनिटर हमेशा हिंदू समुदाय के लड़कों में से ही चुना जाता है और वे हमेशा हम मुस्लिम लड़कों की शिकायत ही करते रहते हैं"। मुस्लिम समुदाय की स्थिति पर २००६ की सच्चर समिति की रिपोर्ट के शीर्ष लेखक ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया, "भारत में मुसलमानों के प्रति व्यवस्थित भेदभाव का माहौल है....जिसका प्रभाव शिक्षा पर भी देखने को मिलता है"। देश के कुछ भागों में मुस्लिम बहुल इलाके स्कूलों की कमी से जूझ रहे हैं।

लड़कियों की स्थिति और भी खराब है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक किशोरी लड़कियों की स्कूल छोड़ने की दर ६४ प्रतिशत अधिक है। इनमें से एक बहुत बड़ी संख्या दलित, आदिवासी अथवा मुस्लिम समुदाय की लड़कियों की है जो आमतौर पर रजस्वला होने के समय, आठवीं कक्षा भी पास किए बिना स्कूल छोड़ देती हैं। उनके बाल विवाह का खतरा भी अधिक होता है। उनके सामान्यतः भाड़े पर काम करने वाले माता-पिता अपनी किशोरी लड़कियों को घर पर अकेला छोड़ने से घबराते हैं और चाहते हैं कि उनकी जल्दी शादी हो जाए। उन्हें भय होता है कि

अविवाहित किशोरी लड़कियों को यौन उत्पीड़न का अधिक खतरा है। हालाँकि शिक्षा का अधिकार कानून में कमजोर वर्ग की लड़कियों की पढ़ाई को जारी रखने के लिए कदम उठाने का प्रावधान है किंतु उसकी कार्यप्रणाली प्रभावी ढंग से कार्यान्वित नहीं हो पाई है।

शारदा नामक एक दलित लड़की को उसके माता-पिता ने स्कूल से हटा लिया क्योंकि वे उसकी सुरक्षा को लेकर चिंतित थे। उसकी इच्छा के विरुद्ध १४ वर्ष में ही उसका विवाह कर दिया गया। विवाह से पहले जब वह अपने माता-पिता की मर्जी के खिलाफ स्कूल गई तो उसे पता चला कि उसका नाम स्कूल के रजिस्टर से हटा दिया गया है। हालाँकि कुछ गाँव वालों ने उसके माता-पिता को इतनी कम उम्र में उसकी शादी न करने की सलाह दी, स्थानीय अधिकारियों अथवा *ग्राम पंचायत* के किसी भी सदस्य ने हस्तक्षेप नहीं किया। उसने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया, "ऐसा कोई नहीं था जिससे मैं मदद की गुहार कर सकती"।

शिक्षा नीतियों के कमजोर कार्यान्वयन के चलते बच्चे मजदूरी की ओर अग्रसर हो रहे हैं। कई बाल कामगार उन बाहर से आए मजदूरों के बच्चे हैं जो गरीब, भूमिहीन और हाशिए पर रहे समुदायों के सदस्य हैं। कुछ अनुमानों के अनुसार, भारत में लगभग साठ लाख बच्चे अपने माता-पिता के साथ होते हैं जब वे काम की तलाश में एक जगह से दूसरी जगह जाते हैं। जैसा कि ह्यूमन राइट्स वॉच के शोध तथा अन्य अध्ययनों से पता चला है, इन आप्रवासी बच्चों के लिए स्कूल तक पहुँच एक बड़ी बाधा रही है। काम करने के कई स्थान स्कूल से दूर होते हैं और जब ये आप्रवासी बच्चे काम ख़त्म होने के बाद अपने घर लौटते हैं तो वे कक्षा में काफी पिछड़ चुके होते हैं।

दस वर्षीय रीमा २०१० में अपने माता-पिता के साथ छत्तीसगढ़ से गुड़गाँव पहुँची। तब से उसका अधिकतर समय विभिन्न इमारतों के निर्माण स्थलों पर बीता है। जब ह्यूमन राइट्स के शोधकर्ता उससे मिले तो रीमा एक गैरसरकारी संगठन द्वारा एक निर्माण स्थल पर, जहाँ उसके माता पिता रह रहे थे, चलाए जा रहे एक अनौपचारिक शिक्षा केंद्र में मिली। किंतु वह एक अस्थाई समाधान था। जब उसका परिवार वहाँ से जाएगा तो रीमा को एक बार फिर स्कूल छोड़ना पड़ेगा। गैरसरकारी संगठन द्वारा चलाए जा रहे केंद्र की एक अध्यापिका गीता रावत ने कहा कि वे छह से १४ वर्ष आयुवर्ग के सभी बच्चों का पास के सरकारी प्राथमिक स्कूल में दाखिला कराने का प्रयास करते हैं, लेकिन यह एक बहुत बड़ी चुनौती है। उन्होंने कहा, अध्यापक

इन बच्चों को दाखिला देने में हिचकिचाते हैं क्योंकि उन्हें पता है कि कुछ महीने बाद ये बच्चे यहाँ से चले जाएँगे। शिक्षा का अधिकार कानून में आप्रवासी बच्चों की आवश्यकताओं पर ध्यान दिए जाने का प्रावधान है किंतु उसे ठीक से अमल में नहीं लाया जा रहा है।

सरकारी प्रतिक्रिया की विफलताएँ

भारत सरकार मानती है कि शिक्षा व्यवस्था से अधिकारहीन बच्चों के दूर होने के पीछे कई अलग-अलग कारण जिम्मेदार हैं। शिक्षा का अधिकार 'समानता' की न केवल "समान अवसर के रूप में व्याख्या करता है बल्कि उसमें इस प्रकार की परिस्थिति के निर्माण की भी बात कही गई है जिसके अंतर्गत समाज के सुविधाहीन वर्ग- अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, मुस्लिम अल्पसंख्यकों, भूमिहीन कृषि मजदूरों के बच्चे तथा विशिष्ट जरूरतों वाले बच्चे आदि इस अवसर का लाभ उठा सकते हैं"। कानून के कार्यान्वयन के दिशानिर्देश इस बात को स्वीकार करते हैं कि ऐसे बच्चों को पर्याप्त शिक्षा दिलाने के लिए न केवल उनके घरों से एक विशिष्ट दूरी पर स्कूल होने जरूरी हैं बल्कि "शिक्षा जरूरतों और पारंपरिक रूप से अलग थलग वर्गों की दुर्दशा को समझना" भी जरूरी है।

हमने जिन स्कूलों का निरीक्षण किया, दुर्भाग्यवश, इस प्रकार की समझ व्याहारिकता में देखने को नहीं मिली। न केवल शिक्षा अधिकारी हाशिए पर रह रहे बच्चों की हाजिरी सुनिश्चित करने के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने में विफल हैं बल्कि स्कूलों के पास भी उन बच्चों की शिक्षा की जरूरतों को पूरा करने की पर्याप्त क्षमता नहीं है जो बड़ी उम्र में स्कूल में दाखिला लेते हैं या स्कूल छोड़ने के बाद दोबारा लौटना चाहते हैं। नए कानून में इस बात की जरूरत बताई गई है कि बच्चों को स्कूल में रोके रखने में सहायता देने के लिए उन्हें आयु के हिसाब से ही कक्षाओं में दाखिला दिया जाए। इसे पूरा करने के लिए तीन महीने से लेकर दो वर्ष तक के सेतु पाठ्यक्रमों का प्रावधान है ताकि बच्चे पढ़ाई में वहीं पहुँच जाएँ जहाँ से उन्होंने छोड़ा था और उससे बेहतर तरीके से जुड़ पाएँ।

हम ग्रामीण इलाकों के जिन स्कूलों में गए, वहाँ इस प्रकार के विशिष्ट प्रशिक्षण का शायद ही कोई प्रावधान था। इसके बजाय, स्कूल एवं शिक्षा अधिकारी प्रायः इस बात से इनकार करते हैं कि वहाँ स्कूल से बाहर या स्कूल छोड़ने वाले बच्चे इतनी बड़ी संख्या में हैं कि इस प्रकार की

विशिष्ट कक्षाओं की जरूरत हो। उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के एक स्कूल के प्रिंसिपल ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया:

> यदि कोई १० वर्ष का बच्चा हमारे पास दाखिले के लिए आता है और उसकी बुनियादी पढ़ाई भी नहीं हुई है तो हम उसकी आयु ६ वर्ष दर्ज करके उसे पहली कक्षा में दाखिला दे देते हैं। यदि हम उसे आयु के हिसाब से ऊँची कक्षा में रखेंगे तो हम एक ही बच्चे पर विशेष ध्यान देते रहेंगे और बाकी बच्चों को पढ़ा ही नहीं पाएँगे।

इसमें हैरानी की कोई बात नहीं है कि जो बच्चे काम करते हैं उनकी स्कूल जाने की संभावना उन बच्चों के मुकाबले कम होती है जो काम नहीं करते। UNICEF के अनुसार भारत में ५ से १४ वर्ष की आयु के सबसे अधिक बाल कामगार हैं। इनकी संख्या कुल मिलाकर लगभग एक करोड़ तीस लाख है। और इनमें सबसे बड़ी तादाद दलित, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य अल्पसंख्यकों की है। ह्यूमन राइट्स वॉच ने पाया कि काम करने वाले बच्चों को उनकी आयु के हिसाब से कक्षा में वापस लाना आमतौर पर निष्प्रभावी रहता है। भारत में बाल मजदूरी से निपटने वाले कानून एवं नीतियाँ हैं, किंतु जैसाकि सरकार स्वयं स्वीकार करती है, राज्य स्तर पर निगरानी का पूरी तरह अभाव है। निगरानी के अभाव में खतरे का सामना कर रहे बच्चों की पहचान होने की संभावना कम ही रहती है और उनकी स्थिति सुधारने की दिशा में कदम उठाए जाने की सम्भावना भी कम ही रहती है।

एक स्पष्ट समस्या है बाल सुरक्षा के अलग-अलग पहलुओं- जैसेकि मजदूरी, शिक्षा, आदिवासी कल्याण तथा सामाजिक न्याय के प्रभारी विभिन्न मंत्रालयों तथा विभागों के बीच समन्वय की कमी। उदाहरणस्वरूप, बाल मजदूरी से छुड़ाए गए बच्चों के लिए श्रम विभाग सेतु स्कूल चलाता है, न कि शिक्षा विभाग। पूर्वी उत्तर प्रदेश में एक वरिष्ठ श्रम अधिकारी ने पूर्व बाल कामगारों की शिक्षा से निपटने की जिम्मेदारी उनके विभाग को सुपुर्द किए जाने पर अपनी हताशा व्यक्त करते हुए कहा कि उनका विभाग ऐसा करने में सक्षम नहीं है। “जब हम बड़ी संख्या में बच्चों को मजदूरी करते देखते हैं और उन्हें बचाते हैं तो हमारे पास इतनी क्षमता नहीं है कि हम इन सब से (सभी सम्बद्ध मामलों से) निपट सकें”। उन्होंने कहा, “यदि हम पाँच बच्चों को बचाते हैं तो सभी प्रकियाएँ पूरी करने और पुनर्वास का काम करने में हमें चार दिन लगते हैं”।

शिक्षा का अधिकार कानून इस बात को मानकर चलता है कि स्थानीय समुदाय, खास तौर पर माता-पिता इस बात को सुनिश्चित करने में प्रमुख भूमिका निभाएँगे कि कानून के प्रावधानों का पालन हो और बच्चों के अधिकारों की रक्षा हो। इसका लक्ष्य है स्कूल प्रबंधन समितियों (SMC) के जरिए, जिनमें स्कूल प्रशासन, स्थानीय प्राधिकरण का कोई सदस्य और अभिभावक शामिल हैं, स्कूलों के साथ सामुदायिक भागीदारी हो। लेकिन हम जिन जिलों में गए वहाँ इस प्रकार की समितियाँ आमतौर पर निष्क्रिय थीं और जहाँ वे काम कर भी रही थीं वहाँ उनका कोई प्रभाव नहीं था। भेदभाव समाप्त करने और सभी के लिए शिक्षा सुनिश्चित करने में इन समितियों को उपयोगी बनाने का काम अभी भी पूरा नहीं हुआ है।

भारत का शिक्षा का अधिकार कानून की सफलता सुनिश्चित करना एक महत्वाकांक्षी और उपयोगी परियोजना है। २००९ में जब से यह कानून अमल में आया है, तब से काफी लाभप्रद रहा है। उल्लेखनीय बात यह है कि स्कूलों की संख्या में वृद्धि हुई है और बड़ी संख्या में छात्रों ने दाखिला भी लिया है और स्कूल जाना शुरू भी किया है। हाशिए पर रह रहे समुदायों के अनेक निर्धन एवं अशिक्षित माता-पिता ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया कि वे इस प्रकार के अवसरों का स्वागत करते हैं और चाहते हैं कि उनके बच्चे शिक्षित हों। साथ ही, कई माता-पिता ने उचित सुविधाओं के अभाव, पढ़ाई की खराबी और अध्यापकों के नियमित रूप से कक्षाओं में न जाने की शिकायत की। और अब भी बड़ी संख्या में बच्चों का स्कूल छोड़ना जारी है।

जब तक सरकार इस प्रकार की कोई प्रणाली विकसित नहीं करती जिसके तहत संवेदनशील बच्चों की निगरानी हो सके और यह सुनिश्चित हो सके कि स्कूल इन अधिकारहीन बच्चों को एक मैत्रीपूर्ण वातावरण दे जहाँ उन्हें पढ़ने में आनंद आए, तब तक यह परियोजना डांवाडोल ही रहेगी। इस प्रकार की निगरानी केवल समय-समय पर हाजिरी के रजिस्टर की जाँच तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिए। स्कूल अधिकारियों के बारे में माना जाता है कि वे बच्चों को स्कूल में बने रहने में सहायक न हो पाने पर अपनी विफलता छिपाने के लिए हाजिरी के रिकॉर्डों में हेराफेरी करते हैं और कई स्कूलों के अधिकारियों ने, जिनसे हमने बात की, खुल कर इस बात को स्वीकार भी किया।

शिक्षा का अधिकार कानून राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग को इस बात का अधिकार देता है कि वह इस कानून के कार्यान्वयन की निगरानी कर सके। किंतु आयोग को न तो पर्याप्त

कर्मचारी दिए गए हैं और न ही स्वंतत्र क्षमता, कि वह इस भूमिका को प्रभावी ढंग से निभा सके। इसके अतिरिक्त आयोग महिला एंव बाल विकास मंत्रालय के अंतर्गत काम करता है उसे मानव संसाधन विकास मंत्रालय की निगरानी करनी होती है जो शिक्षा की देखरेख करता है। आयोग को पैसा भी मानव संसाधन विकास मंत्रालय से ही मिलता है जिससे हित संघर्ष की समस्या उत्पन्न हो जाती है। राजनीति एवं अधिकारी स्तर के हस्तक्षेप भी आयोग को राज्य स्तर पर प्रभावी बनाने में बाधा डालते हैं। और कानून के उचित कार्यान्वयन के लिए जरूरी शिकायतों के निपटारे की कोई प्रणाली भी अभी सभी राज्यों में विकसित नहीं हो पाई है।

कई प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों का एक पक्ष होने के नाते भारत का यह दायित्व भी है कि वह शिक्षा के अधिकार को प्रोत्साहन और सुरक्षा प्रदान कराए। राष्ट्रीय तथा राज्य सरकारों को सभी बच्चो के लिए अनिवार्य और निशुल्क प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करनी चाहिए, शिक्षा के मार्ग में आ रही बाधाएँ दूर करनी चाहिएँ, उन बच्चों के लिए भी जो काम करते हैं और अल्पसंख्यक छात्रों के विरुद्ध भेदभाव समाप्त कराना चाहिए। यदि भारत को शिक्षा का अधिकार कानून में निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करना है तो व्यवस्थित निगरानी एवं जवाबदेही द्वारा यह सुनिश्चित करना कि इन मापदंडों का पालन हो, महत्वपूर्ण है।

मुख्य सिफारिशें

- भारत सरकार को शिक्षा का अधिकार कानून के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए कदम उठाने चाहिएं और उसका केंद्रबिंदु न केवल दाखिला हो बल्कि कम से कम १४ वर्ष की आयु तक हर बच्चे को स्कूल में रोक कर रखना भी हो। एक आवश्यक पहला कदम है बच्चों के दाखिला लेने से लेकर उनके आठवीं कक्षा तक पहुँचने की अवधि निगरानी और उस पर नजर रखने के लिए एक उचित व्यवस्था का निर्माण और उसका कार्यान्वयन। और जरूरी है और उन बच्चों की पहचान के लिए एक सार्वभौमिक प्रणाली जो स्कूल से बाहर हैं, छोड़ चुके हैं या छोड़ने की कगार पर हैं।
- सरकार को स्कूल छोड़ने के खतरे का सामना कर रहे बच्चों की निगरानी के लिए कोई स्पष्ट मापदंड तय करने चाहिएं और ऐसी कार्यप्रणाली विकसित करनी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सम्बद्ध अधिकारी, विशेषकर हाशिए पर रह रहे समुदायों और अल्पसंख्यक समुदायों के साथ संपर्क बनाए रखें और यह सुनिश्चित करने के लिए हस्तक्षेप करें कि जो बच्चो स्कूल छोड़ कर चले गए हैं वे वापस आ जाएँ।

- सरकार को इस प्रकार के स्पष्ट संकेत मिलने की प्रणाली विकसित करनी होगी जिससे स्कूलों में भेदभाव का आभास मिल सके और उससे निपटा जा सके। राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग को ऐसे दिशानिर्देश बनाने चाहएं जिनसे भेदभाव और बच्चों के अन्य प्रकार के उत्पीड़न से निपटा जा सके और साथ ही अनुशासनात्मक उपाय भी लागू किए जा सकें।
- सरकार को मानव संसाधन मंत्रालय को निर्देश देना चाहिए कि वह अध्यापकों के लिए दिशानिर्देश तथा नियम तैयार करें जिनमें सामाजिक जुड़ाव और समानता को व्यवहार में लाने में मदद मिले। जैसेकि हाशिए पर रह रहे समुदायों के बच्चों की स्कूल की गतिविधियों में भागीदारी, विभिन्न जातियों के बच्चों के बीच बेहतर समन्यव तथा इस प्रकार की नई नई गतिविधियों को प्रोत्साहन जिनके जरिए बच्चों को घुलने मिलने का अवसर मिले।

सिफ़ारिशें

भारत सरकार ने शिक्षा का अधिकार कानून लागू करके सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है। किंतु, बेहतर निगरानी और जवाबदेही की प्रणाली के अभाव में सरकार एवं स्कूलों के अधिकारी भेदभाव की पहचान करने, उसका निदान करने और स्कूल छोड़ चुके एवं छोड़ने के खतरे का सामना कर रहे बच्चों की जरूरतों से निपटने में असमर्थ रहेंगे। इसके परिणास्वरूप, कमजोर समुदायों के बच्चे शिक्षा के अपने अधिकारों से वंचित ही रहेंगे।

भारत की केंद्र सरकार को*:*

- शिक्षा का अधिकार कानून के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए कदम उठाएं जिसका उद्देश्य केवल बच्चों को दाखिला दिलाना ही न हो बल्कि प्रत्येक बच्चे को कम से कम १४ वर्ष तक की आयु तक स्कूल में बनाए रहना भी हो। इसके लिए एक आवश्यक पहला कदम है ऐसी व्यवस्था का निर्माण और उसे अमल में लाया जाना जो बच्चों के दाखिला लेने से लेकर उनके आठवीं कक्षा उत्तीर्ण करने तक उनकी निगरानी कर सके और इस बात की जानकारी हासिल कर सके। साथ ही एक सार्वभौमिक कार्यप्रणाली हो जो उन बच्चों की पहचान कर सके जो स्कूल नहीं जाते हैं, छोड़ चुके हैं और अथवा छोड़ने के खतरे का सामना कर रहे हैं।
- सरकार को स्कूल छोड़ने के खतरे का सामना कर रहे बच्चों की निगरानी के लिए कोई स्पष्ट मापदंड तय करने चाहिएं और ऐसी कार्यप्रणाली विकसित करनी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सम्बद्ध अधिकारी, विशेषकर हाशिए पर रहे समुदायों और अल्पसंख्यक समुदायों के साथ संपर्क बनाए रखें और यह सुनिश्चित करने के लिए हस्तक्षेप करें कि जो बच्चो स्कूल छोड़ कर चले गए हैं वे वापस आ जाएँ।
- सरकार को इस प्रकार के स्पष्ट संकेत मिलने की प्रणाली विकसित करनी होगी जिससे स्कूलों में भेदभाव का आभास मिल सके और उससे निपटा जा सके। राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग को ऐसे दिशानिर्देश बनाने चाहएं जिनसे भेदभाव और बच्चों के

अन्य प्रकार के उत्पीड़न से निपटा जा सके और साथ ही अनुशासनात्मक उपाय भी लागू किए जा सकें।

- मानव संसाधन विकास मंत्रालय को निर्देश दिए जाएँ कि राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के शिक्षा का अधिकार कार्यगुट की उन सिफारिशों को अमल में लाए जिनमें स्कूलों मे भेदभाव समाप्त करने की बात कही गई है। इन सिफारिशों में एक 'समानता सूचकांक' विकसित किए जाने का भी प्रावधान है जिसके अंतर्गत स्कूलों में बच्चों के साथ साथ होने, विविधता तथा समानता के स्तर का पता लगाया जा सके और इसके लिए भागीदारी, हाजरी तथा कक्षा में किस तरह का व्यवहार हो रहा है जैसे मानदंडों का इस्तेमाल किया जाए।
- सरकार को मानव संसाधन मंत्रालय को निर्देश देना चाहिए कि वह अध्यापकों के लिए दिशानिर्देश तथा नियम तैयार करें जिनमें सामाजिक जुड़ाव और समानता को व्यवहार में लाने में मदद मिले। जैसेकि हाशिए पर रह रहे समुदायों के बच्चों की स्कूल की गतिविधियों में भागीदारी, विभिन्न जातियों के बच्चों के बीच बेहतर समन्यव तथा इस प्रकार की नई नई गतिविधियों को प्रोत्साहन जिनके जरिए बच्चों को घुलने मिलने का अवसर मिले।
- मानव संसाधन विकास मंत्रालय को निर्देश दिया जाए कि वह यह सुनिश्चित करें कि राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद शिक्षकों को शिक्षित करने में जिस संशोधित पाठ्यक्रम का प्रयोग करें उसमें समानता और समावेश पर बने राष्ट्रीय कार्यबल की सिफारिशों को शामिल किया जाए। इन्हें विभिन्न राज्यों में परिषद द्वारा शिक्षकों की शिक्षा के पाठ्यक्रम को विकसित करने का जो काम किया जाता है उसमें भी शामिल किया जाए।
- ऐसी कार्यप्रणाली बनाई जाए जिसके तहत विभिन्न मंत्रालयों एंव विभागों के बीच नियमित बैठकों तथा जानकारी के आदान प्रदान का सिलसिला शुरू हो जो शिक्षा के अधिकार कानून के सफल कार्यान्वयन के लिए बहुत जरूरी है। इनमें शिक्षा, मानव संसाधन, महिला एवं बाल विकास, श्रम, अल्पसंख्यक मामले, आदिवासी मामले, समाज कल्याण तथा पंचायती राज्य शामिल हैं।
- अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन के समझौता संख्या १३१ की अभिपुष्टि करें जो न्यूनतम आयु (१९७३) से सम्बद्ध है और जिसमें न्यूनतम आयु १५ वर्ष निर्धारित की गई है जब से बच्चे नियमित काम शुरू कर सकते हैं

राज्य सरकारों को:

- शिक्षा का अधिकार कानून के कार्यान्वयन को विस्तृत रूप दिया जाए जिसमें केवल बच्चों के दाखिले की ही बात शामिल न हो बल्कि इस प्रकार की कार्यप्रणाली भी विकसित की जाए कि कैसे उन्हें १४ वर्ष तक की आयु तक स्कूल में रोके रखा जा सके ऐसी व्यवस्था हो जिसके द्वारा प्रत्येक बच्चे की दाखिले से लेकर आठवीं कक्षा पास करने तक निगरानी हो सके।
- शिक्षकों, शिक्षा विभाग के अधिकारियों, स्थानीय अधिकारियों तथा स्कूल प्रबंधन समिति के सदस्यों को प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे भेदभाव तथा अलग थलग रखने के मामलों की बेहतर तौर पर पहचान कर सकें, उससे निपट सकें और स्कूलों में बच्चों के अनुकूल वातावरण तैयार करने में सहायता कर सकें।
- शिक्षकों को समूहों में गतिविधियाँ तथा संवादमूलक शिक्षा जैसे तरीके विकसित करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए जिससे विभिन्न सामाजिक-आर्थिक तबके तथा अन्य जातिगत पृष्ठभूमि के बच्चों में आपसी तालमेल बढ़ाया जा सके।
- शिक्षा में भेदभाव पर रोक सहित शिक्षा के अधिकार पर जनचेतना अभियान शुरू किए जाएँ तथा जहाँ उचित हो वहाँ बच्चों की भागीदारी भी सुनिश्चति की जाए।
- स्वतंत्र बाल अधिकार आयोगों का गठन हो और उन्हें प्रेरित किया जाए कि वे शिकायतों को दूर करन के लिए हेल्पलाइन गठित करें ताकि शिक्षा के अधिकार का उल्लंघन तथा छात्रों के साथ भेदभाव तथा अन्य प्रकार के उत्पीड़न से निपटा जा सके।
- यह सुनिश्चित किया जाए कि प्रत्येक स्कूल में शिक्षा के अधिकार कानून के अनुरूप एक पारदर्शी, प्रशिक्षित तथा प्रभावी स्कूल प्रबंधन समिति हो। हाशिए पर रह रहे समुदायों के सदस्यों की पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करने के विशेष प्रयास किए जाएँ।
- राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के शिक्षा का अधिकार कानून पर कार्यगुट की समुदाय पर आधारित प्रणाली को मजबूत बनाए जाने की सिफारिशों को कार्यान्वयित किया जाए।
- नियमित अभिभावक-शिक्षक बैठकों में माता पिता की भागीदारी को प्रोत्साहन दिया जाए जिसमें स्कूल प्रबंधन समिति के सदस्यों तथा पंचायत के प्रतिनिधियों को सम्मिलित करना शामिल हो।

- ऐसे रास्ते निकाले जाएँ जिनसे बच्चों को स्कूल में भेदभाव कम करने में प्रमुख भूमिका निभाने का अवसर मिले। जैसे, छात्र समितियाँ हों जिनमें अल्पसंख्य समुदाय के प्रतिनिधि हों जो इन मामलों पर चर्चा करके अपनी सिफारिशें स्कूल प्रबंधन समिति तक पहुँचाएँ।
- अभिभावकों को अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए प्रेरित करने के लिए, विशेषकर जहाँ बाल मजदूरी एक आम बात है, ग्राम स्तर के सामुदायिक कार्यकर्ताओं को नियुक्त करने के लिए नागिरक समाज गुटों के साथ मिल कर काम करें।
- बाल सुरक्षा के अलग अलग पक्षों की देखरेख कर रहे विभिन्न विभागों के बीच अधिक सहयोग एवं समन्वय सुनिश्चित किया जाए, जैसे शिक्षा विभाग, श्रम विभाग तथा आदिवासी कल्याण विभाग। इन विभागों के अधिकारी कम से कम हर महीने एक बार मिलें और जानकारी का आदान प्रदान करें जिसमें उनके सामने आने वाली चुनौतियों की बात शामिल हो और यह भी कि उन्हें एक दूसरे से किस प्रकार के सहयोग की आवश्यकता है।

विदेशी दानकर्ताओं, सहायता एजेंसियों तथा सम्बद्ध सरकारों को:

- सरकार के उपक्रम को सहयोग दें तथा शिक्षा का अधिकार कानून की निगरानी और प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बेहतर दिशानिर्देश विकसित करने में तकनीकी सहायता दें।
- प्राथमिक शिक्षा में हाशिए पर रहे समुदायों के विरुद्ध भेदभाव मिटाने के सरकारी प्रयासों में सहयोग के लिए तकनीकी सहायता उपलब्ध कराएँ।
- बच्चों को शामिल करने और उनके साथ समानता के व्यवहार के लिए बच्चों के अनुकूल वातावरण के निर्माण पर ध्यान केंद्रित करने वाले स्कूलों को बेहतर पाठ्यक्रम तथा शिक्षा के तरीके विकसित करने के लिए तकनीकी सहायता दें।

आभार

इस रिपोर्ट को ह्यूमन राइट्स वॉच के एशिया विभाग में शोधकर्ता जयश्री बजोरिया ने लिखा और इस बारे में शोध किया। रिपोर्ट का संपादन दक्षिण एशिया निदेशक मीनाक्षी गांगुली ने किया। विधि एवं नीति निदेशक जेम्स रॉस ने कानूनी समीक्षा की तथा कार्यक्रम उप निदेशक जोसेफ सॉर्डर्स ने कार्यक्रम संबंधी समीक्षा प्रदान की। बाल अधिकार के उप निदेशक बीड शेपर्ड ने अतिरिक्त जानकारी उपलब्ध कराई। एशिया विभाग में सहायक जूलिय ब्लेकनर ने संपादन तथा प्रस्तुतिकरण में सहायता दी। प्रकाशन निदेशक ग्रेस चोई ने रिपोर्ट के प्रस्तुतिकरण में सहायता दी।

हम धन्यवाद कहना चाहेंगे उन सभी गैरसरकारी संगठनों तथा बाल अधिकार कार्यकर्ताओं को जिन्होंने हमारे अनुसंधान में सहायता की और अपने अनुभव और विश्लेषण हमसे बांटे। ह्यूमन राइट्स वॉच विशेषकर, सेंटर फॉर सोशल एक्विटी ऐंड इनक्लूज़न के ऐनी नमाला, जयश्री पी मंगूभाई एवं सत्येंद्र कुमार, एमवी फाउंडेशन के आर वेंकट रेड्डी, राजेंद्र प्रसाद, जे भास्कर तथा वी.वी. राव, आश्रय की ग्रेस निर्मला, पीपल्स विजिलेंस कमेटी ऑन ह्यूमन राइट्स (पीवीसीएचआर) के लेनिन रधुवंशी, श्रुति नागवंशी, आनंद प्रसाद, मंगला तथा गजाला कमर, नारी गुंजन की सुधा वर्घीस, चाइल्ड राइट्स ऐंड यू के पंकज मेहता एवं सारादिंदु बंद्योपाध्याय, बाल सखा के सनत सिन्हा, महेश एवं दिनेश, सेंटर फॉर सिविल सोसायटी के पार्थ शाह, नेशनल दलित मूवमेंट फॉर जस्टिस के डॉक्टर प्रसाद सिरिवेल्ला, रूरल ऑर्गेनाइजेशन फॉर सोशल ऐडवांसमेंट के मुश्ताक अहमद, सोनभद्र विकास समिति के राजेश चौबे, शिखर प्रशिक्षण संस्थान की संध्या, प्रथम काउंसिल फॉर वलनरेबल चिल्ड्रेन के रंजीत कुमार, मोबाइल क्रेचेज़ की सुदेशना सेनगुप्ता एवं भाग्यलक्ष्मी राव, बेसिक फाउंडेशन के जलालुद्दीन तथा अहसास के रामकुमार वर्मा का आभार प्रकट करना चाहता है।

इन सब से बढ़ कर हम उन बच्चों और उनका माता पिता को धन्यवाद कहेंगे जिन्होंने अलग थलग पड़ने और भेदभाव के अपने पीड़ादायक अनुभव हमारे साथ बांटे। हम अन्य सभी बच्चों, अभिभावकों, अध्यापकों तथा ग्राम परिषद के सदस्यों को आभारी हैं जिन्होंने हमसे बात करने के लिए समय निकाला और अपने दृष्टिकोण तथा विचार हमसे साझा किए।

“वे कहते हैं हम गंदे हैं”

भारत में हाशिए पर रह रहे लोगों को शिक्षा से वंचित रखना

भारत का महत्वाकांक्षी मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा के बाल अधिकार का कानून जो 2010 से प्रभावी है, 6 से 14 वर्ष की आयु के हर बालक को निशुल्क प्राथमिक शिक्षा की गारंटी देता है। कानून के लागू होने के चार वर्ष बाद लगभग हर बच्चे का दाखिला हुआ लेकिन उपस्थिति एक अलग ही कहानी बयान करती है। देश भर में लगभग 40 प्रतिशत बच्चे आठवीं कक्षा पास करने से पहले ही स्कूल छोड़ चुके होते हैं।

कक्षाओं में बच्चों को रोके रखने के मार्ग में एक गंभीर बाधा है दलित, आदिवासी गुटों और मुसलमानों जैसे हाशिए पर रहे और सबसे संवेदनशील समुदायों के बच्चों के प्रति लगातार जारी भेदभाव। आंध्र प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा दिल्ली राज्यों में कुछ विशिष्ट अध्ययनों पर आधारित रिपोर्ट ‘वे कहते हैं हम गंदे हैं’- भेदभाव के उन विभिन्न पहलुओं की जाँच कर रही है जिसके सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों को सामना करना पड़ता है और साथ ही उनसे निपटने के लिए विस्तृत सिफारिशें सामने रख रही है।

रिपोर्ट से पता चलता है कि संवेदनशील बच्चों की जरूरतों, जैसेकि जो बच्चे स्कूल छोड़ चुके हैं उनके लिए विशेष पाठ्यक्रम या फिर आप्रवासी मजदूरों के बच्चों के लिए उनके काम करने की जगह पर स्कूल, इस प्रकार के कार्यक्रमों का जो प्रावधान था उन्हें अभी भी पूरी तरह कार्यान्वयित नहीं किया गया है। शिकायतों के निपटारे के लिए कार्यप्रणाली तथा भेदभावपूर्ण व्यवहार के लिए स्कूल अधिकारियों को जवाबदेह ठहराने की प्रक्रियाओं का अभाव है।

ह्यूमन राइट्स वॉच का मानना है कि शिक्षा का अधिकार कानून के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बेहतर जवाबदेही आवश्यक है। वह इस बात की मांग करता है कि केंद्र एवं राज्य सरकारें प्रत्येक बच्चे के दाखिले से लेकर उसके आठवीं कक्षा उत्तीर्ण किए जाने के समय तक की जानकारी और निगरानी रखें और ये सुनिश्चित करने के लिए तुरंत हस्तक्षेप करें कि वे सभी बच्चे जो नियमित रूप से स्कूल नहीं जा रहे हैं, स्कूल छोड़ने की कगार पर हैं या छोड़ चुके हैं, स्कूल वापस लौट सकें। शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जाए और उन्हें प्रेरित किया जाए कि वे हाशिए पर रह रहे समुदायों के अलग थलग होने को रोक सकें। और अधिकारियों को इस प्रकार के संकेत विकसित करने चाहिएं जिनसे स्कूलों में भेदभाव का पता चल सके और स्कूलों के जो अधिकारी इसके जिम्मेदार पाए जाएँ उनके साथ अनुशासन से काम लिया जाए।

(ऊपर) भारत के पूर्वी राज्य बिहार के एक गाँव के एक सरकारी स्कूल में एक रसोइया दोपहर का मुफ्त भोजन परोसता हुआ। © 2013 अदनान आबिदी/ रॉयटर्स

(सामने का कवर) उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले का एक प्राथमिक स्कूल। स्कूल के प्रिंसिपल ने ह्यूमन राइट्स वॉच को बताया कि आदिवासी छात्र एक 'बड़ी समस्या' हैं। "उनका मुख्य उद्देश्य होता है आ कर भोजन करना, पढ़ाई नहीं"। उन्होंने कहा, "जरा देखिए वे कितने गंदे हैं"। © 2014 योगेश अग्रवाल/ ह्यूमन राइट्स वॉच